



# अध्यात्म

# उपनिषद्

(Adhyātma Upanishad)

## UPANISHADS: AN INTRODUCTION

The word 'Upanishad' in Sanskrit language means *upa* (near), *ni* (down) and *shad* (to sit), which can be summed up as 'to sit down near' (and receive instructions). The teacher and student or a spiritual master and his disciples setting were not always prevalent in strict sense. In some cases, it was husband answering questions about immortality to his wife or a teenage boy was being taught by *Yama* (God of Death). The teachers, in some cases were women sages and the seekers of inspiration were kings. Besides dialogues, Upanishads also contain narrations, similes, metaphors, illustrations and symbolism.

In the quietude of caves and monasteries or ashrams situated on the banks of holy Ganges, this mystic knowledge was exchanged for centuries. It can be said that Upanishads are collection of writings representing oral transmission of such knowledge.

Most of the Upanishads are either commentary on or are an extension of four Vedas and in most cases constitute *Vedanta* (the end or an ultimate part of Veda). The characteristics of the Upanishads are their universality and the total absence of any dogmatism. Upanishads elaborate upon highest metaphysical state, beyond which is the realm of Silence.

Upanishads are considered as the backbone of Hinduism. The thoughts expressed inside Upanishadic cluster forms the core of Indian philosophy. One can find doctrines of *Karma* (action), *Yoga* (union), *Punarjanma* (rebirth), *moksha* (liberation), *atma* (soul) and *brahman* (super soul), inside these scriptures. Upanishads also gives valuable insight into Hindu belief system behind the creation of universe and the reasons behind its sustenance.

According to Historians, Upanishads were composed between year 800-400 B.C. Experts differ on total number of Upanishads, but most agree on 108. Major among them are *Chhandogya & Kena (Sam Veda)*; *Aitareya & Kaushitaki (Rig Veda)*; *Katha, Taittiriya, Brihadaranyaka, Svetasvatara, Isa & Prasna (Yajur Veda)*; *Mundaka & Mandukya (Atharva Veda)*. From various elaboration found inside Upanishadic verses, it can be said that, sages like *Yagnavalkya, Uddalaka, Aitareya, Pippalada, Sanat Kumar, Shwetaketu, Shandilya, Manu* and even *Maharshi Narada* disseminated Upanishadic knowledge and thus, can be said to be their authors.

Upanishads are acknowledged as pinnacle of human wisdom. None other scripture of that time can claim to contain such sublime and noble thoughts as found inside Upanishads. Written almost at the time of the dawn of civilization, Upanishads continues to evoke tremendous interest even today, among literates of both, East as well as West.



## ॥ अध्यात्मोपनिषत् ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।  
 पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥  
 ॐ शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः ॥

यत्रान्तर्याम्यादिभेदस्तत्त्वतो न हि युज्यते ।  
 निर्भेदं परमाद्वैतं स्वमात्रमवशिष्यते ॥  
 अन्तःशरीरे निहितो गुहायामज एको नित्यमस्य  
 पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरे संचरन्त्यं पृथिवी न वेद ।  
 यस्यापःशरीरं यो अपोऽन्तरे संचरन्त्यमापो न विदुः ।  
 यस्य तेजः शरीरं यस्तेजोऽन्तरे संचरन्त्यं तेजो न वेद ।  
 यस्य वायुः शरीरं यो वायुमन्तरे संचरन्त्यं वायुर्न वेद ।  
 यस्याकाशः शरीरं य आकाशमन्तरे संचरन्त्यमाकाशो न वेद ।  
 यस्य मनः शरीरं यो मनोऽन्तरे संचरन्त्यं मनो न वेद ।  
 यस्य बुद्धिः शरीरं यो बुद्धिमन्तरे संचरन्त्यं बुद्धिर्न वेद ।  
 यस्याहंकारः शरीरं योऽहंकारमन्तरे संचरन्त्यमहंकारो न वेद ।  
 यस्य चित्तं शरीरं यश्चित्तमन्तरे संचरन्त्यं चित्तं न वेद ।  
 यस्याव्यक्तं शरीरं योऽव्यक्तमन्तरे संचरन्त्यमव्यक्तं न वेद ।  
 यस्याक्षरं शरीरं योऽक्षरमन्तरे संचरन्त्यम्क्षरं न वेद ।  
 यस्य मृत्युः शरीरं यो मृत्युमन्तरे संचरन्त्यं मृत्युर्न वेद ।  
 स एष सर्वभूतान्तरात्मापहतपाप्मा दिव्यो देव एको नारायणः ।  
 अहं ममेति यो भावो देहाक्षादावनात्मनि ।  
 अध्यासोऽयं निरस्तव्यो विदुषा ब्रह्मनिष्ठया ॥१॥  
 ज्ञात्वा स्वं प्रत्यगात्मानं बुद्धितद्धृतिसाक्षिणम् ।  
 सोऽहमित्येव तद्धृत्या स्वान्यत्रात्म्यमात्मनः ॥२॥  
 लोकानुवर्तनं त्यक्त्वा त्यक्त्वा देहानुवर्तनम् ।  
 शास्त्रानुवर्तनं त्यक्त्वा स्वाध्यासापनयं कुरु ॥३॥  
 स्वात्मन्येव सदा स्थित्या मनो नश्यति योगिनः ।  
 युक्त्या श्रुत्या स्वानुभूत्या ज्ञात्वा सार्वत्रिक्यमात्मनः ॥४॥  
 निद्राया लोकवार्तायाः शब्दादेरात्मविस्मृतेः ।  
 क्वचिन्नवसरं दत्त्वा चिन्तयात्मानमात्मनि ॥५॥  
 मातापित्रोर्मलोद्भूतं मलमांसमयं वपुः ।

|  |                           |                         |                    |              |                 |
|--|---------------------------|-------------------------|--------------------|--------------|-----------------|
| त्यक्त्वा                                    | चण्डालवद्दूरं             | ब्रह्मभूय               | कृती               | भव           | ॥६॥             |
| घटाकाशं                                      | महाकाश                    | इवात्मानं               | परात्मनि           |              |                 |
| विलाप्याखण्डभावेन                            | तूष्णीं                   | भव                      | सदा                | मुने         | ॥७॥             |
| स्वप्रकाशमधिष्ठानं                           |                           | स्वयंभूय                | सदात्मना           |              |                 |
| ब्रह्माण्डमपि                                | पिण्डाण्डं                | त्यज्यतां               | मलभाण्डवत्         |              | ॥८॥             |
| चिदात्मनि                                    | सदानन्दे                  | देहरूढामहंघियम्         |                    |              |                 |
| निवेश्य                                      | लिङ्गमुत्सृज्य            | केवलो                   | भव                 | सर्वदा       | ॥९॥             |
| यत्रैष                                       | जगदाभासो                  | दर्पणान्तःपुरं          | यथा                |              |                 |
| तद्ब्रह्माहमिति                              | ज्ञात्वा                  | कृतकृत्यो               | भवानघ              |              | ॥१०॥            |
| अहंकारग्रहान्मुक्तः                          |                           | स्वरूपमुपपद्यते         |                    |              |                 |
| चन्द्रवद्विमलः                               | पूर्णः                    | सदानन्दः                | स्वयंप्रभः         |              | ॥११॥            |
| क्रियानाशाद्भवेच्चिन्तानाशोऽस्माद्वासनाक्षयः |                           |                         |                    |              |                 |
| वासनाप्रक्षयो                                | मोक्षः                    | सा                      | जीवन्मुक्तिरिष्यते |              | ॥१२॥            |
| सर्वत्र                                      | सर्वतः                    | सर्वब्रह्ममात्रावलोकनम् |                    |              |                 |
| सद्भावभावानादाद्याद्वासनालयमश्रुते           |                           |                         |                    |              | ॥१३॥            |
| प्रमादो                                      | ब्रह्मनिष्ठायां           | न                       | कर्तव्यञ्          | कदाचन        |                 |
| प्रमादो                                      | मृत्युरित्याहुर्विद्यायां | ब्रह्मवादिनः            |                    |              | ॥१४॥            |
| यथापकृष्टं                                   | शैवालं                    | क्षणमात्रं              | न                  | तिष्ठति      |                 |
| आवृणोति                                      | तथा                       | माया                    | प्राज्ञं           | वापि         | पराङ्मुखम् ॥१५॥ |
| जीवतो  | यस्य                      | कैवल्यं                 | विदेहोऽपि          | स            | केवलः           |
| समाधिनिष्ठतामेत्य                            | निर्विकल्पो               | भवानघ                   |                    |              | ॥१६॥            |
| अज्ञानहृदयग्रन्थेर्निःशेषविलयस्तदा           |                           |                         |                    |              |                 |
| समाधिना                                      | विकल्पेन                  | यदाद्वैतात्मदर्शनम्     |                    |              | ॥१७॥            |
| अत्रात्मत्वं                                 | दृढीकुर्वन्नहमादिषु       | संत्यजन्                |                    |              |                 |
| उदासीनतया                                    | तेषु                      | तिष्ठेद्धटपटादिवत्      |                    |              | ॥१८॥            |
| ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं                      | मृषामात्रा                | उपाधयः                  |                    |              |                 |
| ततः  | पूर्णं                    | स्वमात्मानं             | पश्येदेकात्मना     | स्थितम्      | ॥१९॥            |
| स्वयं  | ब्रह्मा                   | स्वयं                   | विष्णुः            | स्वयमिन्द्रः | स्वयं शिवः      |
| स्वयं  | विश्वमिदं                 | सर्वं                   | स्वस्मादन्यन्न     | किञ्चन       | ॥२०॥            |
| स्वात्मन्यारोपिता                            |                           | शेषाभासवस्तुनिरासतः     |                    |              |                 |
| स्वयमेव                                      | परंब्रह्म                 | पूर्णमद्वयमक्रियम्      |                    |              | ॥२१॥            |
| असत्कल्पो                                    | विकल्पोऽयं                | विश्वमित्येकवस्तुनि     |                    |              |                 |
| निर्विकारे                                   | निराकारे                  | निर्विशेषे              | भिदा               | कुतः         | ॥२२॥            |
| द्रष्टृदर्शनदृश्यादिभावशून्ये                |                           | निरामये                 |                    |              |                 |
| कल्पार्णव                                    | इवात्यन्तं                | परिपूर्णं               | चिदात्मनि          |              | ॥२३॥            |

|                                  |                           |                         |              |                |      |
|----------------------------------|---------------------------|-------------------------|--------------|----------------|------|
| तेजसीव                           | तमो                       | यत्र                    | विलीनं       | भ्रान्तिकारणम् |      |
| अद्वितीये                        | परे                       | तत्त्वे                 | निर्विशेषे   | भिदा कुतः      | ॥२४॥ |
| एकात्मके                         | परे                       | तत्त्वे                 | भेदकर्ता     | कथं वसेत्      |      |
| सुषुप्तौ                         | सुखमात्रायां              | भेदः                    | केनावलोकितः  |                | ॥२५॥ |
| चित्तमूलो                        | विकल्पोऽयं                | चिताभावे                | न कश्चन      |                |      |
| अतश्चित्तं                       | समाधेयि                   | प्रत्यग्रूपे            | परात्मनि     |                | ॥२६॥ |
| अखण्डानन्दमात्मानं               | विज्ञाय                   | स्वस्वरूपतः             |              |                |      |
| बहिरन्तः                         | सदानन्दरसास्वादनमात्मनि   |                         |              |                | ॥२७॥ |
| वैराग्यस्य                       | फलं                       | बोधो                    | बोधस्योपरतिः | फलम्           |      |
| स्वानन्दानुभवच्छान्तिरेषैवोपरतेः |                           | फलम्                    |              |                | ॥२८॥ |
| यद्युत्तरोत्तराभावे              | पूर्वरूपं                 | तु                      | निष्फलम्     |                |      |
| निवृत्तिः                        | परमा                      | तृप्तिरानन्दोऽनुपमः     | स्वतः        |                | ॥२९॥ |
| मायोपाधिर्जगद्योनिः              |                           | सर्वज्ञत्वादिलक्षणः     |              |                |      |
| पारोक्ष्यशबलः                    | सत्याद्यात्मकस्तत्पदाभिधः |                         |              |                | ॥३०॥ |
| आलम्बनतया                        | भाति                      | योऽस्मत्प्रत्ययशब्दयोः  |              |                |      |
| अन्तःकरणसंभिन्नबोधः              | स                         | त्वंपदाभिधः             |              |                | ॥३१॥ |
| मायाविद्ये                       | विहायैव                   | उपाधी                   | परजीवयोः     |                |      |
| अखण्डं                           | सच्चिदानन्दं              | परं                     | ब्रह्म       | विलक्ष्यते     | ॥३२॥ |
| इत्थं                            | वाक्यैस्तथार्थानुसन्धानं  | श्रवणं                  | भवेत्        |                |      |
| युक्त्या                         | संभावितत्वानुसन्धानं      | मननं                    | तु तत्       |                | ॥३३॥ |
| ताभ्यं                           | निर्विचिकित्सेऽर्थे       | चेतसः                   | स्थापितस्य   | यत्            |      |
| एकतानत्वमेतद्धि                  |                           | निदिध्यासनमुच्यते       |              |                | ॥३४॥ |
| ध्यातृध्याने                     | परित्यज्य                 | क्रमाद्ध्येयैकगोचरम्    |              |                |      |
| निवातदीपवच्चित्तं                |                           | समाधिरभिधीयते           |              |                | ॥३५॥ |
| वृत्तयस्तु                       | तदानीमप्यज्ञाता           | आत्मगोचराः              |              |                |      |
| स्मरणादनुमीयन्ते                 | व्युत्थितस्य              | समुत्थिताः              |              |                | ॥३६॥ |
| अनादाविह                         | संसारे                    | संचिताः                 | कर्मकोटयः    |                |      |
| अनेन                             | विलयं                     | यान्ति                  | शुद्धो धर्मो | विवर्धते       | ॥३७॥ |
| धर्ममेघमिमं                      | प्राहुः                   | समाधिं                  | योगवित्तमाः  |                |      |
| वर्षत्येष                        | यथा                       | धर्मामृतधाराः           | सहस्रशः      |                | ॥३८॥ |
| अमुना                            | वासनाजाले                 | निःशेषं                 | प्रविलापिते  |                |      |
| समूलोन्मूलिते                    | पुण्यपापाख्ये             | कर्मसंचये               |              |                | ॥३९॥ |
| वाक्यमप्रतिबद्धं                 |                           | सत्प्राक्परोक्षावभासिते |              |                |      |
| करामलकमवद्बोधपरोक्षं             |                           | प्रसूयते                |              |                | ॥४०॥ |
| वासनानुदयो                       | भोग्ये                    | वैराग्यस्य              | तदावधिः      |                |      |

|                                      |                              |                               |                             |
|--------------------------------------|------------------------------|-------------------------------|-----------------------------|
| अहंभावोदयाभावो                       | बोधस्य                       | परमावधिः                      | ॥४१॥                        |
| लीनवृत्तेरनुत्पत्तिर्मर्यादोपरतेस्तु |                              | सा                            |                             |
| स्थितप्रज्ञो                         | यतिरयं                       | यः                            | सदानन्दमश्रुते              |
| ब्रह्मण्येव                          | विलीनात्मा                   | निर्विकारो                    | विनिष्क्रियः                |
| ब्रह्मात्मनोः                        | शोधितयोरेकभावावगाहिनि        |                               | ॥४३॥                        |
| निर्विकल्पा                          | च                            | चिन्मात्रा                    | वृत्तिः प्रज्ञेति कथ्यते    |
| सा                                   | सर्वदा                       | भवेद्यस्य                     | स जीवन्मुक्त इष्यते         |
| देहेन्द्रियेष्वहंभाव                 |                              | इदंभावस्तदन्यके               |                             |
| यस्य                                 | नो                           | भवतः                          | क्वापि स जीवन्मुक्त इष्यते  |
| न                                    | प्रत्यग्ब्रह्मणोर्भेदं       | कदापि                         | ब्रह्मसर्गयोः               |
| प्रज्ञया                             | यो                           | विजानाति                      | स जीवन्मुक्त इष्यते         |
| साधुभिः                              | पूज्यमानेऽस्मिन्पीड्यमानेऽपि | दुर्जनैः                      |                             |
| समभावो                               | भवेद्यस्य                    | स                             | जीवन्मुक्त इष्यते           |
| विज्ञातब्रह्मतत्त्वस्य               | यथापूर्वं                    | न                             | संसृतिः                     |
| अस्ति                                | चेन्न                        | स                             | विज्ञातब्रह्मभावो बहिर्मुखः |
| सुखाद्यनुभवो                         |                              | यावतावत्प्रारब्धमिष्यते       |                             |
| फलोदयः                               | क्रियापूर्वो                 | निष्क्रियो                    | नहि कुत्रचित्               |
| अहं                                  | ब्रह्मेति                    | विज्ञानात्कल्पकोटिशतार्जितम्  |                             |
| संचितं                               | विलयं                        | याति                          | प्रबोधात्स्वप्नकर्मवत्      |
| स्वमसङ्गमुदासीनं                     | परिज्ञाय                     | नभो                           | यथा                         |
| न                                    | श्लिष्यते                    | यतिः                          | किञ्चित्कदाचिद्भाविकर्मभिः  |
| न                                    | नभो                          | घटयोगेन                       | सुरागन्धेन लिप्यते          |
| तथात्मोपाधियोगेन                     | तद्धर्मे                     | नैव                           | लिप्यते                     |
| ज्ञानोदयात्पुरारब्धं                 | कर्म                         | ज्ञानान्न                     | नश्यति                      |
| अदत्त्वा                             | स्वफलं                       | लक्ष्यमुद्दिश्योत्सृष्टबाणवत् | ॥५३॥                        |
| व्याघ्रबुद्ध्या                      | विनिर्मुक्तो                 | बाणः                          | पश्चात्तु गोमतौ             |
| न                                    | तिष्ठति                      | भिनत्येव                      | लक्ष्यं वेगेन निर्भरम्      |
| अजरोऽस्म्यमरोऽस्मीति                 | य                            | आत्मानं                       | प्रपद्यते                   |
| तदात्मना                             | तिष्ठतोऽस्य                  | कुतः                          | प्रारब्धकल्पना              |
| प्रारब्धं                            | सिद्ध्यति                    | तदा                           | यदा देहात्मना स्थितिः       |
| देहात्मभावो                          | नैवेष्टः                     | प्रारब्धं                     | त्यज्यतामतः                 |
| प्रारब्धकल्पनाप्यस्य                 | देहस्य                       | भ्रान्तिरेव                   | हि                          |
| अध्यस्तस्य                           | कुतस्तत्त्वमसत्यस्य          | कुतो                          | जनिः                        |
| अजातस्य                              | कुतो                         | नाशः                          | प्रारब्धमसतः कुतः           |
| ज्ञानेनाज्ञानकार्यस्य                | समूलस्य                      | लयो                           | यदि                         |

तिष्ठत्ययं कथं देह इति शङ्कावतो जडान् ।  
 समाधातुं बाह्यदृष्ट्या प्रारब्धं वदति श्रुतिः ॥५९॥  
 न तु देहादिसत्यत्वबोधनाय विपश्चिताम् ।  
 परिपूर्णमनाद्यन्तम प्रमेयम विक्रियम् ॥६०॥  
 सद्धनं चिद्धनं नित्यमानन्द घनमव्ययम् ।  
 प्रत्यगेकरसं पूर्णमनन्तं सर्वतोमुखम् ॥६१॥  
 अहेयमनुपादेयम नाधेयमनाश्रयम् ।  
 निर्गुणं निष्क्रियं सूक्ष्मं निर्विकल्पं निरञ्जनम् ॥६२॥  
 अनिरूप्यस्वरूपं यन्मनोवाचामगोचरम् ।  
 सत्समृद्धं स्वतःसिद्धं शुद्धं बुद्धमनोदृशम् ॥६३॥  
 स्वानुभूत्या स्वयं ज्ञात्वा स्वमात्मानमखण्डितम् ।  
 स सिद्धः सुसुखं तिष्ठ निर्विकल्पात्मनात्मनि ॥६४॥  
 क्व गतं केन वा नीतं कुत्र लीनमिदं जगत् ।  
 अधुनैव मया दृष्टं नास्ति किं महदद्भुतम् ॥६५॥  
 किं हेयं किमुपादेयं किमन्यत्किं विलक्षणम् ।  
 अखण्डानन्द पीयूष पूर्णब्रह्म महार्णवे ॥६६॥  
 न किंचिदत्र पश्यामि न शृणोमि न वेद्म्यहम् ।  
 स्वात्मनैव सदानन्दरूपेणास्मि स्वलक्षणः ॥६७॥  
 असङ्गोऽहमनङ्गोऽहमलिङ्गोऽहं हरिः ।  
 प्रशान्तोऽहमनन्तोऽहं परिपूर्णश्चिरन्तनः ॥६८॥  
 अकर्ताहम भोक्ताहम विकारोऽहमव्ययः ।  
 शुद्ध बोधस्वरूपोऽहं केवलोऽहं सदाशिवः ॥६९॥  
 एतां विद्यामपान्तरतमाय ददौ । अपान्तरतमो ब्रह्मणे ददौ ।  
 ब्रह्मा घोराङ्गिरसे ददौ । घोराङ्गिरा रैक्वाय ददौ ।  
 रैक्वो रामाय ददौ ।  
 रामः सर्वेभ्यो भूतेभ्यो ददावित्येतन्निर्वाणानुशासनं  
 वेदानुशासनं वेदानुशासनमित्युपनिषत् ॥

॥ इति अध्यात्मोपनिषत् ॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।  
 पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥  
 ॐ शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः ॥

